पशुओं का पसंदीदा संगीत

डॉ. डी. बालसुब्रमण्यन

समय-समय पर विज्ञान ऐसे मुद्दे उठाता है जो समाज में बहस को जन्म देते हैं। इनमें से कुछ मुद्दे ऐसे होते हैं जो लोकाचार से सम्बंधित होते हैं जबकि कुछ का सम्बंध तो नैतिकता से भी होता है। उदाहरण के लिए एक बुज़ुर्ग महिला का भाड़े की मां बनने का निर्णय ताकि उसकी बेटी बच्चा पा सके। अन्य मुद्दे इतने गहरे तो नहीं होते मगर फिर भी काफी विवादास्पद होते हैं।

इसी तरह का एक मुद्दा हाल ही में साइन्स पत्रिका के पन्नों को सुशोभित कर रहा है। पत्रिका के 3 अगस्त 2007 के अंक में प्रकाशित इसाबेल पेरेट्ज़ के लेख का शीर्षक है: 'मंकीज़ हेव टिन इअर्स' यानी बंदरों के कान पतरे के होते हैं। पेरेट्ज़ ने हाल ही में एम.आई.टी. के शोधकर्ता जोश मैकडर्मोट और मार्क हौसेन द्वारा किए गए अनुसंधान का सार प्रस्तुत किया है।

शोधकर्ताओं का निष्कर्ष है कि नई दुनिया के बंदरों (जैसे मार्मोसेट और कॉटन टॉप टेमेरिन्स) को संगीत नापसंद होता है मगर यदि उन्हें संगीत सुनने पर मजबूर किया जाए, तो उन्हें तेज़ गति की अपेक्षा धीमी गति की धुनें ज़्यादा पसंद आती हैं। इसके अलावा यदि उनके सामने धीमी गति की धुन (जैसे लोरियां) और खामोशी के बीच चुनने की छूट हो, तो वे खामोशी को चुनते हैं। दूसरी ओर, इसी तरह की परिस्थितियों में इन्सान खामोशी की अपेक्षा संगीत सुनना पसंद करते हैं।

यह थोड़ा आश्चर्यजनक मगर रोचक निष्कर्ष है क्योंकि बंदरों, वनमानुषों और हम इन्सानों में ध्वनि और लय की अनुभूति की शरीर-क्रियात्मक व्यवस्था लगभग एक-सी है। लिहाज़ा, इन शोधकर्ताओं का मत है कि संगीत का प्रेरणास्पद बंधन इन्सानों के लिए अनूठा है। इसीलिए इसाबेल ने बंदरों के कानों को पतरे का बताया है।

तो क्या संगीत के प्रति सौंदर्यबोध शुद्धतः इन्सानी गुण है? संगीत की उत्पत्ति क्या है? यह एक पुरानी गुत्थी है जिसे अभी तक सुलझाया नहीं गया है। बंदरों और वनमानुषों के संगीत का अध्ययन कई शोधकर्ताओं ने किया है। ये अध्ययन इस उम्मीद में किए गए हैं कि इससे हमें जैव विकास की दृष्टि से मानवीय संगीत की उत्पत्ति को समझने में मदद मिलेगी। चिम्पैंज़ी हुंकारते हैं और हूट-हूट करते हैं। अन्य वनमानुष पेड़ों के तनों को पीटते हैं। गिब्बन्स और नीलगिरी लंगूर खरखराते हैं जबकि गोरिल्ले समवेत स्वर में चीखते हैं।

मगर जर्मन प्राणी वैज्ञानिक थॉमस गीसमैन का ख्याल है किइ जिस तरह के लंबे, निर्बाध ध्वन्यात्मक सिलसिले को हम संगीत के रूप में जानते-पहचानते हैं, वह इन्सान के अलावा किसी अन्य प्रजाति में नहीं पाया जाता। वे आगे बताते हैं कि गिब्बन जिस तरह की पेचीदा ध्वनियां गाते हैं, वह एक उद्देश्य से होता है। इसका उद्देश्य प्रणय साथी की तलाश या चेतावनी वगैरह माना जाता है। इस गायन में अमूर्तिकरण नहीं होता जिसे मात्र आनंद के लिए उच्चारित किया जाए।

यह तथ्य भी रोचक है कि प्रयोगों में जब उन्हें संगीत सुनने के लिए मजबूर किया जाता है या प्रलोभन दिया जाता है, तो वे तेज़ लय को नहीं बल्कि धीमी लय को पसंद करते हैं।

यह जानना भी रोचक है कि ये प्रयोग कैसे किए जाते हैं। टेमेरिन्स या मार्मोसेट्स के सामने एक वी (V) आकार की नली होती है। दोनों भुजाओं के अंत में एक लाउडस्पीकर लगा होता है जिसमें से पसंदीदा संगीत बजता है। एक भुजा में धीमी लोरी या कोई लोक धुन बजती है जबकि दूसरी भुजा में एक तेज़ गति का गीत 'नोबडी गेट्स आउट एलाइव' बजता है। दोनों भुजाओं के मध्य बिंदु पर भोजन रखा होता है और एक-एक घिरनी लगी होती है जिससे उस भुजा का प्रवेश द्वार खुलता है। थोड़े प्रशिक्षण के बाद यह रिकॉर्ड किया जाता है कि बंदर किस भुजा को ज़्यादा

पसंद करते हैं। इसके लिए उन्हें कई मौके दिए जाते हैं।

सवाल यह उठता है कि मार्मोसेट और टेमेरिन्स संगीत की बजाय खामोशी क्यों पसंद करते हैं। क्या इसलिए कि हमारे विपरीत उन्हें संगीत आनंददायक या सुकूनदायक नहीं लगता? और ऐसा क्यों है कि वे तेज़ की बजाय धीमी लय को पसंद करते हैं?

क्या ऐसा हो सकता है कि मिज़ाज में अंतर के चलते बंदरों को ऐसे उद्दीपन संकेत चेतावनीरूपी और चिंताजनक लगते हैं जबकि हमारे लिए ये मात्र स्फूर्तिदायक होते हैं? इन सवालों के जवाबों का इन्तज़ार है। बहरहाल, वे कम से कम धीमे संगीत को झेल लेते हैं, या शायद उससे तसल्ली पाते हैं, इस आधार पर इतना तो कहा ही जा सकता है कि उनके कान पतरे के नहीं हैं।

इसाबेल पेरेट्ज़ के शोध पत्र के जवाब में डॉ. ऑस्टिन गेस ने साइन्स पत्रिका के ही 28 सितंबर 2007 के अंक में लिखा है कि पक्षियों को भी संगीत पसंद होता है। डॉ. गेस ने जापानी शोधकर्ता जोड़ी एस. वातानेब और के. सातो द्वारा 1998 व 1999 में किए गए शोध का हवाला दिया है जिसमें पता चला था कि कुछ गोरैयों को संगीत पसंद है और वे आधुनिक संगीतकार शोनबर्ग के संगीत की अपेक्षा शास्त्रीय संगीतज्ञ जे.एस. बैक का संगीत पसंद करती हैं।

इन शोधकर्ताओं ने एक प्रकोष्ठ बनाया जिसमें तीन टहनियां थीं। इनमें से एक टहनी पर जे.एस. बैक का संगीत बजता था और दूसरी पर शोनबर्ग का। इस प्रयोग में भी गोरैयों को बतौर इनाम कुछ दाने मिलते थे। यह देखा गया कि चिड़िया बैक वाली टहनी पर काफी देर तक बैठती थीं। यह भी देखा गया कि उन्हें बैक की अन्य रचनाएं भी पसंद आती थीं जबकि शोनबर्ग की सारी रचनाएं उन्हें नापसंद रहीं।

इन परिणामों से पता चलता है कि गोरैया में संगीत के प्रति पसंद-नापसंद होती है और पक्षी सिर्फ संगीत को पसंद ही नहीं करते, वे तो संगीत की रचना भी करते हैं - एकल, युगल, समवेत संगीत। उनका संगीत का खज़ाना काफी विशाल है। कोयल, मैना, बुलबुल, पपीहा आदि के उदाहरण मशहूर हैं। एक पक्षी चक्रवाहम के नाम पर तो एक राग भी है। मगर सवाल यह है कि क्या पक्षियों के गीत संगीत की श्रेणी में रखे जा सकते हैं?

युनाइटेड किंग्डम के जैव विकासविद पीटर स्लेटर का मत है कि इस सवाल का जवाब परिभाषा पर निर्भर है। पक्षियों के गीतों में ताल होती है और मेलोडी होती है। ऐसा लगता है कि उनके गीतों में ऐसा कुछ होता है जो मात्र जीव वैज्ञानिक भूमिका की आवश्यकता से अधिक है। दूसरे शब्दों में पक्षी मात्र अपने आनंद के लिए गा सकते हैं। इस मामले में हम इन्सान उनके समान हैं।

तंत्रिका वैज्ञानिकों ने गीत गाने वाले पक्षियों और इन्सानों के भेजे की संरचना की तुलना करने पर कुछ सामान्य बातें देखी हैं। इनका सम्बंध शाब्दिक रूपों के निर्माण, भाषा और संगीत से है।

भाषा का विकास और संगीत परस्पर सम्बंधित रहे हैं। तोते जैसे कुछ पक्षी न सिर्फ इन्सानों की बोली की नकल उतारते हैं बल्कि पालतू बनाए जाने पर इन्सानी शब्दों में स्वयं को अभिव्यक्त करना भी सीख लेते हैं।

इसका एक असाधारण उदाहरण एलेक्स नामक तोता था। एलेक्स को वैज्ञानिक आइरीन पेपरबर्ग ने पाला हुआ था। हाल ही में 31 वर्ष की आयु में एलेक्स की मृत्यु हुई। दी इकॉनॉमिस्ट पत्रिका ने तो एलेक्स का शोक संदेश भी प्रकाशित किया था। पेपरबर्ग के साथ रहते हुए एलेक्स न सिर्फ 'बड़ा', 'छोटा', 'समान', 'असमान' जैसी अवधारणाएं समझने लगा था बल्कि उनका उपयोग भी करता था। इसके अलावा वह छह तक गिन भी लेता था।

अभी हाल तक माना जाता था कि ये क्षमताएं सिर्फ उन जंतुओं में होती हैं जिन्हें हम प्राइमेट्स कहते हैं। बदकिस्मती से पक्षियों को वह सम्मान नहीं मिल पाया है, जिसके वे हकदार हैं।

अब जब हम यह समझ गए हैं कि इन्सानों के अलावा भी कई प्राणी संगीत की प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं और शायद लुत्फ भी उठाते हैं, तो हमें इस मानवीय मुगालते से मुक्ति पा लेनी चाहिए जो किसी व्यक्ति ने भृतहरि के नीति सतकाम की पुनर्रचना करते हुए लिखी थीः साहित्य संगीत कला विहीनम् मनुष्यम रूपेण मृगश्चरंति। ***(स्रोत फीचर्स)***